गुटबंदी की अवधारणा का समाजशास्त्रीय विश्लेषण

डा0 मौ0 उजैर
पीएच0डी0 (समाजशास्त्र)

डा0 आर0के0 ठाकुर
एसोसिएट प्रोफेसर
स्नातकोत्तर समाजशास्त्र विभाग
हिन्दू कॉलेज, मुरादाबाद

सारांश

भारतीय ग्रामीण समाज संक्रमण के दौर से गुजर रहा है। जहाँ एक ओर परम्परागत मूल्य, ग्रामीण नेतृत्व व शक्ति संरचना परिवर्तित हो रहे हैं वहीं नित नवीन व्यवहारिक प्रतिमान उभर रहे हैं। पंचायती राज व्यवस्था के कारण शक्ति का विकेन्द्रीकरण हुआ है, जिसकी अभिव्यक्ति गुट व गुटबन्दी के रूप में हो रही है। गुटबन्दी के कारण ग्रामीण समुदाय में हम की भावना में कमी आयी है। तथ्य तो यह है कि वर्तमान भारतीय ग्रामीण समुदाय एक गुट समूह के रूप में रूपान्त्रित हो गया है। इस गुटबन्दी के एकाधिक आधार व स्वरूप हैं।

प्रस्तावना–

भारत गांवों का देश है, जहाँ आज भी कुल जनसंख्या का लगभग 70 प्रतिशत भाग निवास करता है। यद्यपि ग्राम पंचायत भारत की प्राचीन विषेशता है तथापि स्वतंत्रता के पश्चात्गांव के विकास हेतुपंचायती राज व्यवस्था को संवैधानिक प्रावधान किया गया। इसके परिणाम स्वरूप गांव के शक्ति संरचना में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया। प्रो0 योगेन्द्र सिंह का मत है कि ''ग्रामीण समाज में परम्परगत आर्थिक और जातिय प्रस्थिति में सैद्धान्तिक रूप से महत्वपूर्ण परिवर्तन हुये हैं। प्राचीन परम्परागत सामंतवादी स्वरूप प्रजातान्त्रिक ढांचे में बदल रहा है। गुट प्रतिदिन के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक प्रतिक्रिया में भाग लेने लगे हैं।'' प्रजातांत्रिक व्यवस्था के कारण पिछड़े वर्गों (पिछड़ी जाति, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजातियाँ) को सरकारी सरंक्षण मिलने के कारण वह शिक्षा एवं राजनीति के माध्यम से समाज में ऊपर की ओर बढ़ रहे हैं''। व्यस्क मताधिकार के कारण पिछड़े वर्गों में राजनैतिक चेतना आयी है। फलस्वरूप जहाँ परम्परागत प्रभु जाति पिछड़े वर्गों को दबाकर रखना चाहती है, वही पिछडे वर्गों के लोग उनके प्रभुत्व को चुनौती देने लगे हैं। परिणामस्वरूप गांव में गुटबन्दी की प्रक्रिया तीव्र हुई है।

सहयोग एवं संघर्ष मानव अन्तःक्रिया के दो मौलिक स्वरूप है,जो एक दूसरे के विरोधी है। जब व्यक्ति सामान्य उद्देश्यों, आदर्शो एवं मूल्यों की प्राप्ति हेतु साथ–साथ कार्य करता है, तो इसे सहयोग कहते हैं। इसके विपरीत सब समान लक्ष्यों, आदर्शो एवं मूल्यों की कमी होती है, तो आपस में संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती है। इस सहयोग एवं संघर्ष का आधार गुट है।

लेख का उद्देश्य–

प्रस्तुतलेख का उद्देश्य गुटबंदी की अवधारणा, आधार व स्वरूप का समाजशास्त्रीय विश्लेषण करना है।

अध्ययन विधि–

प्रस्तुत लेख विश्लेषणात्मक है, जो द्वितीयक तथ्यों पर आधारित है।

गुट की अवधारणा को स्पष्ट करते हुये मानक हिन्दी शब्दकोष में लिखा गया है ''गुट किसी विशिष्ट उद्देश्य से बनाया गया व्यक्तियों का वह छोटा दल है, जो किसी विशिष्ट पक्ष या मत का पोषण करने के लिए बनाया जाता है।''[1] इसी प्रकार फेयरचाइल्ड का मत है कि ''एक द्वन्द्व समूह का प्रकार,जो उद्देश्य में पृथक, अधिक या कम प्रकृति से क्षनिक, जो आन्तरिक द्वन्द्व की स्थितियों के परिणाम स्वरूप समुदायों तथा प्रतिस्थापित संगठनों में स्वतः विकसित होते है, गुट कहलाता है।''[2]

''पोकॉक के शब्दों में ''गुटों का तात्पर्य सम्पूर्ण समुदाय के अन्तर्गत विधमान संघर्षपूर्ण समूह से है। यद्यपि संघर्ष गुटों की आन्तरिक आवश्यकता नहीं है लेकिन इसमें अक्सर समुदायों को विभक्त करने की प्रवृत्ति होती हैं गुट स्थाई समूह नहीं होता तथा इसकी सदस्यता विभिन्न परिस्थितियों पर निर्भर करती है। इस दृष्टिकोण से गुट एक संगठक इकाई है।''[3]

''इनसाइक्लोपिडिया ऑफ सोशल साइंस में गुट शब्द साधारणतः किसी बड़ी इकाई के अंगीभूत समूह को निर्दिष्ट करने के लिये प्रयुक्त किया गया है। ऐसा समूह कुछ विशिष्ट लोगों या नीतियों की उन्नति के लिये कार्य करता है।''[4]

चेम्बर डिक्शनरी के अनुसार ''गुट व्यक्तियों का संयुक्त अथवा एक साथ कार्य करने का समूह जिसका प्रायः प्रयोग नकारात्मक अर्थ में किया जाता हैं''[5]

गुट के सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गयी परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि गुट का तात्पर्य ऐसे लघु समूह से है,जिसके सदस्य अपने स्वार्थो की पूर्ति के लिए एकीकृत होते है तथा हम की भवना से ओत–प्रोत होते हैं लेकिन इसकी प्रकृति अपेक्षाकृत अस्थायी होती है।

गुट की विशेषताएँ–

उपरोक्त परिभाषाओं के विश्लेषण के आधार पर गुट की निम्नलिखितविषेशताएँ प्रकाश में आती है:–

1. अन्य सामाजिक समूह की भांति गुट भी एक सामाजिक समूह है,क्योंकि गुट के लिये एकाधिक व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ती है।
2. गुट आकार में अत्याधिक छोटा होता है, क्योंकि गुट के सदस्यों की संख्या अधिक होने पर उसमें हम की भावना कम हो जाती है और गुट विखण्डित हो जाता है अर्थात् दूसरे गुट का निर्माण हो जाता है।
3. गुट का निर्माण किन्ही स्वार्थो की पूर्ति के लिये होता है। हित या स्वार्थ के अभाव में गुट का निर्माण सम्भव नहीं है। सामूहिक स्वार्थ या हित ही गुट के सदस्यों को संगठित रखता है।
4. गुट की सदस्यता अनिवार्य न होकर ऐच्छिक होती है। चूँकि गुट का निर्माण स्वार्थ या हित पर आधारित होता है। इसलिए इसकी सदस्यता ऐच्छिक होती है। व्यक्ति कभी भी किसी भी गुट का सदस्य बन सकता है और स्वार्थ की पूर्ति होने पर छोड़ भी सकता है।
5. गुट के सदस्य आपस में एकता का प्रदर्शन करते हुए हम की भावना द्वारा जुड़े होते हैं।
6. गुट के सदस्य अपने स्वार्थो की पूर्ति के लिये आने वाली बाधाओं का सामना करने के लिये सदैव तैयार रहते हैं। इस संदर्भ में हिंसा एवं अहिंसा दोनो प्रकार के साघनों का प्रयोग करते हैं।
7. गुट राजनैतिक संघर्ष से अधिक प्रभावित होता है।
8. गुट सभी ग्रामीण समाजों में विधमान होता है। इसलिये इसकी प्रकृति सार्वभौमिक होती है।

गुट के आधार–

गुट का अध्ययन करते समय एक स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि गुट का निर्माण किन आधारों पर होता है तथा कौन से आधार है जो गुटों को स्थायित्व प्रदान करते हैं? वास्तव में गुट के स्थायित्व का प्रमुख कारण उसके सदस्यों के सामान्य स्वार्थ है। प्रत्येक गुट के सदस्य सदैव कुछ सामान्य स्वार्थो से बंधे होते है तथा गुट को अपने हितों की अधिकतम पूर्ति का एक साधन मानते हैं। यदि उनके हितों की पूर्ति में कोई बाधा उत्पन्न होती है, तो एक गुट के सभी सदस्य मिलकर उसे दूर करने का प्रयत्न करते हैं। यहीं पर गुट की भूमिका अक्सर संघर्षात्मक भी हो जाती है। यह ध्यान रखना आवश्यक है कि जिस गुट के विरूद्ध संघर्ष किया जाये उसके द्वारा यह भूमिका संघर्षात्मक समझी जाती है लेकिन बाधा सामना करने वाले गुट के लिये संघर्ष का स्वरूप भी प्रकार्यात्मक होता है। सामान्य स्वार्थ के अतिरिक्त भी कुछ ऐसे महत्वपूर्ण कारण अथवा परिस्थितियॉ होती हैं, जो किसी गुट के स्थायित्व के लिये महत्वपूर्ण समझी जाती है। इस सम्बंध में लेविस ने गुट के स्थायित्व के लिये तीन आवश्यक शर्तों का उल्लेख किया है, जो निम्नवत है''[6]

1. गुट के लिये सदस्यों का संगठित होना आवश्यक है, जिससे वे एक सम्बद्व इकाई के रूप में कार्य कर सकें। बिना सदस्य के गुट का निर्माण सम्भव नहीं है।
2. गुट की सदस्य–संख्या इतनी होनी चाहिए कि गुट एक आत्मनिर्भर समूह के रूप में कार्य कर सकें तथा किसी विशेष अवसर पर उसे बाहरी सदस्यों के सहयोग की आवश्यकता न हो। उदाहरण के लिये यदि किसी गुट के सदस्य मिलकर एक धार्मिक उत्सव मनाना चाहें तो गुट में सदस्यों की संख्या इतनी अवश्य होनी चाहिये कि उत्सव से सम्बन्धित सभी कार्य और आवश्यकताएं वे स्वयं पूरी कर सके। वास्तविकता यह है कि विशेषीकरण और परिवर्तन के वर्तमान युग में आज प्रत्येक गुट अनेक अवसरों पर बाहरी सदस्यों का सहयोग भी लेने लगे हैं। ऐसी स्थिति में आत्मनिर्भरता को गुट के स्थायित्व का अनिवार्य आधार न मानकर केवल एक सहयोगी आधार के रूप में ही स्वीकार किया जाना चाहिये।
3. गुट की स्थिरता के लिये आवश्यक है कि उसकेपास पर्याप्त आर्थिक साधन हो, जिससे प्रत्येक स्थिति में गुटके सदस्यों की न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सके। इस दृष्टिकोण से गुट के अन्तर्गत कुछ ऐसे साधन–सम्पन्न लोगों का होना आवश्यक है, जो गुट के निर्धन सदस्यों को रोजगार, ऋण तथा विभिन्न अवसरों पर आर्थिक सहायता प्रदान करते रहें। यही कारण है कि गुट के साधन सम्पन्न सदस्य अन्य सदस्यों के लिये कृषि योग्य भूमि, बीज एवं अन्य सुविधाओं की व्यवस्था करते हैं। कुछ विशेष परिस्थितियों में यदि गुट के किसी अन्य समूह अथवा व्यक्ति के साथ संघर्ष करना पड़ता है, तो वो ऐसी स्थिति में मुकदमें तथा अन्य प्रकार के व्यय का प्रबन्ध भी इस साधन–सम्पन्न सदस्यों के द्वारा ही किया जाता है। यही कारण है कि गांव में अक्सर किसी गुट की शक्ति का मूल्यांकन उसकी आर्थिक स्थिति के आधार पर ही किया जाता है। इस दृष्टिकोण से भी आर्थिक साधन गुट के स्थायित्व का महत्वपूर्ण आधार माना जाता है।

जाति व्यवस्था भारतीय समाज का एक प्रमुख आधार है, जिससे यहॉ का सामाजिक, आर्थिक राजनीतिक अथवा सांस्कृतिक पक्ष प्रभावित होता है। जैसा कि ''इरावती कर्वे''[7] का कथन है ''जाति व्यवस्था हिन्दू समाज के वैविध की संवाहिका एवं संरक्षिका रही है, जहॉ जाति व्यवस्था विभिन्न जातियों को जोड़ने का प्रयास करती है। वही दूसरी ओर समाज के अनेक गुटो को भी विभाजित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जाति व्यवस्था की कठोरता ने शोषण, अन्याय, विषमता तथा अमानवीय व्यवहारों को प्रोत्साहित किया है। परिणामस्वरूप जाति के आधार पर समाज विभिन्न गुटो एवं उपगुटों में विभाजित हो गया।

व्यवहारिक रूप से भारतीय समाज में धर्म गुटबंदी एवं शक्ति संघर्ष का महत्वपूर्ण आधार रहा है। जैसा कि राम मनोहर लोहिया ने लिखा है ''धर्म दीर्घकालिक राजनीति है तथा राजनीति अल्पकालिक धर्म है।'' भारतीय ग्रामीण समाज में धर्म के आधार पर गुटबन्दी आम बात है। विशेषतः हिंदू–मुस्लिम के नाम पर हमेशा गुटबन्दी होती रहती है।

राजनीति व्यक्ति–चेतना की सर्वाधिक तर्क संगत एवं संगठित अभिव्यक्ति है तथा इस नाते यह समाज वैज्ञानिकों के लिए प्रारम्भ से ही एक विमर्श का विषय रहा है। ग्रामीण समाज में बड़े भू–स्वामी, साहूकार आदि अपना अस्तित्व एवं प्रभुत्व बनाए रखने के लिए गुटों का निर्माण करके निम्न जातियों, बटाईदारो,भूमिहीन श्रमिकों को अपने अधीन रखकर शोषण करते रहना चाहते हैं। दूसरी ओर साधनहीन, निर्धन एवं निम्न जातियॉ भी शोषण से सुरक्षा पाने के लिए गुटो का निर्माण कर रही है।समकालीन ग्रामीण समाजों में गुट निर्माण का प्रमुख कारण जाति व्यवस्था, जाति संरचना एवं कार्यों में परिवर्तन का आना है। ग्रामों में गुटों का निर्माण का प्रमुख कारण जाति के परम्परागत विशेषताओं में परिवर्तन होना है। 'ऑस्करलेविस' ने रामपुर ग्राम के अध्ययन में पाया कि वहाँ पर जाटों के 78 परिवार 6 गुटों में तथा 31 हरिजन परिवार 4 गुटों में बटे हुए थे। ग्रामों में एक जाति भी अनेक गुटों में विभक्त हो सकते हैं।

परम्परागत ग्रामीण नेतृत्व की प्रकृति प्रदत्त था और समकालीन नेतृत्व की प्रकृति अर्जित है। पहले ग्रामीण शक्ति संरचना एवं नेतृत्व के निर्धारक उच्च जाति, बड़े भू–स्वामी, जमींदारी–प्रथा, परम्परागत ग्राम पंचायत, जन्म, आयु, आर्थिक संम्पन्नता थी, वही आज संख्यात्मक बाहुल्यता, अर्जित प्रस्थिति, शिक्षा, नेतृत्व के अन्य आधुनिक गुण है। परम्परागत प्रभुत्व में संघर्ष नहीं था।सभी अपनी प्रस्थिति को भगवान का विधान मानते थे। परंतु आज मतदान के अधिकार ने चुनाव प्रणाली, प्रजातंत्र आदि में निम्न जातियों, श्रमिकों, भूमिहीनों आदि को ग्रामीण नेतृत्व का निर्णायक बना दिया है। उच्च जातियाँ वर्तमान परिवर्तित राजनैतिक परिस्थितियों में गुटों का निर्माण करके अपना प्रभुत्व बनाए रखने एवं शोषण करने का प्रयास कर रही हैं वही दूसरी ओर निम्न जातियाँ व भूमिहीन श्रमिक भी शोषण से सुरक्षा प्राप्त करने के लिए गुटों का सहारा ले रही हैं। संख्यात्मक बहुल्यता के द्वारा निम्न जातियों, अनुसूचित जातियों और जनजातियों ने मतदान प्रणाली के द्वारा कुछ स्थानीय पंचायत संगठन ने शक्ति संरचना पर एकाधिकार प्राप्त कर लिया है। जनतांत्रिक व्यवस्था ने ग्रामों में गुट निर्माण की प्रक्रिया को प्रोत्साहित किया है। ग्रामों में राजनीतिक दल पहुँच गए हैं। ये अपने स्वार्थों के लिए जातियों एवं ग्रामवासियों में फूट डालकर गुटों का निर्माण करते हैं। राजनैतिक दल विभिन्न जातियों के समान विचारों समस्याओं और उद्देश्य वालों में एकता पैदा करके नए–नए गुट बनाते रहते हैं। इन गुटों के निर्माण से ग्रामवासियों में लड़ाई झगड़े तनाव तथा हिंसा में वृद्धि हो रही है। निष्कर्षत यह कहा जा सकता है कि आधुनिक राजनैतिक परिवर्तनों ने ग्रामों में गुट निर्माण की प्रक्रिया को प्रोत्साहित करके ग्रामों को गुट समाज में परिवर्तित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

गुटबंदी के प्रकार–

पॉल ब्रास ने उत्तर प्रदेश के गुटबन्दी के तीन प्रमुख प्रकारो का वर्णन किया है जो निम्न प्रकार हैं–

1. एक गुटीय व्यवस्था–

एक गुटीय व्यवस्था में एक गुट अधिक प्रभावशाली होता है, जबकि दूसरा गुट कमजोर होता है। यही प्रभावशाली गुट सम्पूर्ण गतिविधियों को संचालित करता है। प्रभावशाली गुट के दल का प्रमुखनेता होता है। इसे एक गुटीय व्यवस्था इसलिये कहा जाता है,क्योंकि बहुत से समूहों के बीच अन्य

गुटों के होते हुए इसमें एक ही गुट अधिक प्रभावशाली और शक्तिशाली होता है। गोंडा में मनकापुर के राजा का गुट एवं मेरठ में चौधरी चरण सिंह ने जिन गुटों को जन्म दिया वे अन्य गुटों की अपेक्षा प्रभावशाली एवं शक्तिशाली थे।

2. अनाकार गुटीय व्यवस्था–

इसमें कोई एक गुट प्रभावशाली नहीं होता। यह अस्थिर राजनीति का परिचायक है। अनाकार गुटीय व्यवस्था में छोटे–छोट अनेक गुट होते हैं। ब्रास इसे ''लूज एडहॉक एलाइन्सेज'' कहते हैं।

3. द्विगुटीय व्यवस्था&

द्विगुटीय व्यवस्था में राजनीतिक संघर्ष को दो पूर्णरूपेण संगठित गुटो द्वारा प्रतिपादित किया जाता है। इसमें यद्यपि अन्य गुट विद्यमान रहते हैं, किन्तु उनका सम्बंध दो गुटो में से किसी एक के साथ जुड़ा होता है। ऐसे गुटों काअस्तित्व सामान्यतः भारत के अधिकांश गावों में देखा जाता है।

उक्त सभी अवस्थाओं में संघर्ष बराबर विद्यमान रहता है। वास्तव में राजनीतिक गुटबन्दी के लिए संघर्ष युक्त सम्बंधों का होना आवश्यक पाया जाता है। इन संघर्षयुक्त सम्बंधों के आधारों का विश्लेषण निम्न प्रकार किया जा सकता है।

1. राजनीतिक दल में विभिन्न गुटों के प्रमुख नेता अपने समर्थकों को कई भौतिक लाभ वितरित करते हैं। विशेष रूप से आर्थिक लाभ, जिनमें परमिट दिलाना, लाइसेन्स दिलाना, नौकरियॉ दिलाना आदि प्रमुख हैं।
2. वकील मुवक्किल सम्बन्धी गुटबन्दी में विशेष भूमिका निभाते है। जहॉ वकील राजनीतिक नेता बन जाता है तब वह कई मुवक्किलों को निःशुल्क सेवा प्रदान करके अपना अनुयायी बना लेता है तथा एक छोटा गुट तैयार करता है।
3. कई बार स्वायत्त शासन संस्था (नगर पालिका अथवा ग्राम पंचायत) पर नियन्त्रण रखने वाले कुछ नेता अपना एक छोटा उपसमूह बना लेते हैं, जो अन्य नेताओं, जिनका इस संस्था पर प्रभाव नहीं हो से विरोध में अपना अस्तित्व कायम रखता है।

डोनाल्ड राजेन्थाल ने राजनैतिक गुटों के निम्नलिखित चार प्रकार बताये है–[8]

1. व्यक्तिगत अनुसरण के गुट

व्यक्तिगत अुनसरण के गुटों में व्यक्तिगत क्षमता के आधार पर व्यक्ति अपना छोटा उपसमूह बना लेता है। इस गुट के विशेष प्रतिष्ठा, वरिष्ठता, व्यक्तिगत योग्यता से कुछ लोगों को फंसाकर उन्हे अन्य लोगो के विरोध में खड़ा कर देते हैं।

2. मशीन गुट

दूसरे प्रकार में मशीन गुट है, इसमें कुछ व्यक्तियों को संगठित तरीकों से लाभ पहुॅचाकर उन्हें विरोधी उपसमूह के रूप में सक्रिय रखा जाता है। इस गुट में व्यक्तिगत वफादारी के स्थान पर संस्थागत वफादारी होती है तथा गुट के नेता गुट की संरचना में परिवर्तन बिना रद्दो बदल कर देता है। जबकि व्यक्तिगत अनुसरण के गुटों में व्यक्तियोंका नेतृत्व नहीं बदला जाता है तथा वफादारी भी व्यक्तिगत होती है।

3. मौलिक गुट

गुट के मौलिक रूप में उपसमूह की एकता का आधार आरोपित पहचान या प्रतिस्थिति होती है। इन गुटों में क्षेत्र,जाति, धर्म, परिवार या भाषा आदि को आधार मानकर समान क्षेत्र, जाति, धर्म, परिवार या भाषा के लोगों के छोटे–छोटे उपसमूह बन जाते हैं, जो दूसरे लोगों के विरोध में अपनी स्पष्ट नीति अपनाते हैं। ये अधिक स्थाई गुट होते हैं।

4. प्रत्यात्मक गुट

प्रत्यात्मक गुट तब बनाते है, जब समान हेतुओं एवं रूचि वाले व्यक्ति सामान्य सिद्धान्तों एवं आदर्शों को लेकर एक साथ संगठित होते हैं। इनमें उद्देश्य परिभाषित होते हैं तथा ये गुट अधिक उच्च स्तरीय बौद्धिक सहमति के आधार पर बनते हैं। विभिन्न राजनैतिक दलों में मौलिक गुट तथा व्यक्तिगत अनुसरण के गुट पाये जाते हैं। रॉडनी डब्लू, जोन्स ने इन्दौर नगर के कांग्रेस दल के गुटों का विवेचन प्रस्तुत करते हुए लिखा है कि कांग्रेस दल में गुट मौलिक आधारों पर अधिक बनते हैं। जाति एवं भाषा मुख्य कारक हैं, जो फूट डालने के लिए पर्याप्त है। इनसे लम्बवत् एवं ध्रुवीय बन्धनों का स्वरूप निर्धारित होता है।

निष्कर्ष–

उपरोक्त विश्लेषण के पश्चात हम कह सकते हैं कि गुटबंदी वर्तमान राजनीति विशेषकर ग्रामीण राजनीति का आवश्यक अंग है। इसके निर्माण के अनेक आधार होते हैं तथा यह स्वरूप में कई प्रकार के होते हैं। गुटबंदी के प्रकार्य एवं अकार्य दोनों होते हैं। इसकी प्रकृति सार्वभौमिक होती है। पंचायती राज व्यवस्था के कारण वर्तमान भारतीय ग्रामीण समुदाय में गुटबन्दी की प्रवृति दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है।

सन्दर्भ–

1. रामचन्द्र वर्मा (सम्प0) : ''मानक हिन्दी कोष हिन्दी साहित्य सम्मेलन'' प्रयाग भाग–2, 1965, पृष्ठ सं0–109.
2. एच0पी0 फेयरचाइल्ड (इडिटेड): ''डिक्शनरी ऑफ सोशियोलॉजी'' लिटिल फिल्ड एडम्स, 1964 पृष्ठ सं0–112.
3. डेविड पोकॉक :''द बेसिस ऑफ फैक्शन इन गुजरात'' ब्रिटिश जनरल ऑफ सोशियोलॉजी 1957, पृष्ठ सं0–296.
4. इनसाइक्लोपिडिया ऑफ सोशल साइंस वोल्यूम 6 मैक्मिलन पब्लिशर्स लन्दन, 1968 पृष्ठ सं0–49.
5. विलियम गोड़िड : (सम्प) ''चेम्बर डिक्शनरी'' ऐलाइड पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 1964, पृष्ठ सं0–38
6. ऑस्कर लेविस : ''विलेज इन र्नोथन इण्डिया'' यूनिवर्सिटी ऑफ इलीनोईस प्रेस अरबन 1958, पृष्ठ सं0–113–114.
7. इरावती कर्वे : ''अनुवादक गोपाल भारद्वज हिन्दू समाज और जाति व्यवस्था'' ओरियन्ट लॉगमैन 1975, पृष्ठ सं0– 16.
8. डोनाल्ड रोजन्थाल : ''फक्शंन एण्ड एलाइन्सेस इन इण्डियन सिटीस पॉलिटिक्स'', मिडवेस्ट जनरल एण्ड पॉलिटिकल साइंस न्यूयार्क, 1960, पृष्ठ सं0– 320–49.